ॐ श्री कृष्ण शरणं मम ॐ

卐 श्रद्धात्रयविभागयोग नामक सप्तदशो अध्याय 卐

ठाकुर भिम सिंह द्वारा प्रस्तुत
श्रीमद्भगवद्गीता अमृत
श्लोकों के गूढ़ रहस्यों के साथ

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

सप्तदशोऽध्यायः श्रद्धात्रयविभागयोग

01-06 श्रद्धा और शास्त्रविपरीत घोर तप करने वालों का विषय

07-22 आहार, यज्ञ, तप और दान के पृथक-पृथक भेद

23-28 ॐतत्सत् के प्रयोग की व्याख्या

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अर्जुन उवाचः ये शास्त्रविधिम् उत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वम् आहो रजस् तमः ॥१॥

अर्जुन बोले— हे कृष्ण, जो व्यक्ति शास्त्र-विधि छोड़कर केवल श्रद्धापूर्वक (with faithfulness, reverential belief, implicit confidence) ही पूजा आदि करते हैं, उनकी निष्ठा कैसी है? क्या वह सात्त्विक है अथवा राजसिक या तामसिक है ? (१७.०१)

BG 17.1: Arjun said: O Krishna, where do they stand who disregard the injunctions of the scriptures, but still worship with faith? Is their faith in the mode of goodness, passion, or ignorance?

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्रीभगवानुवाचः त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥२॥

श्रीभगवान बोले— मनुष्यों की स्वाभाविक श्रद्धा (अर्थात् निष्ठा) तीन प्रकार की — सात्त्विक, राजसिक और तामसिक — होती है, उसे सुनो. (१७.०२)

BG 17.2: The Supreme Divine Personality said: Every human being is born with innate faith, which can be of three kinds—*sāttvic, rājasic,* or *tāmasic*. Now hear about this from Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥३॥

हे अर्जुन, सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके स्वभाव (तथा संस्कार) के अनुरूप होती है. मनुष्य अपने स्वभाव से जाना जाता है. मनुष्य जैसा भी चाहे वैसा ही बन सकता है (यदि वह श्रद्धापूर्वक अपने इच्छित ध्येय (**Goal, Aim**) का चिन्तन करता रहे). (१७.०३)

BG 17.3: The faith of all humans conforms to the nature of their mind. All people possess faith, and whatever the nature of their faith, that is verily what they are.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ४ - यजन्ते सात्त्विका देवान्य, क्षरक्षांसि राजसाः ।
प्रेतान्भूतगणां श्चान्ये, यजन्ते तामसा जनाः ॥

सत्विक मनुष्य देवताओं का पूजन करते हैं, राजस मनुष्य यक्षों तथा राक्षसों का और दूसरे जो तामस मनुष्य हैं, वे प्रेतों और भूतगणों का पूजन करते हैं ।

Those in the mode of goodness worship the celestial gods; those in the mode of passion worship the *yakṣhas* and *rākṣhasas*; those in the mode of ignorance worship ghosts and spirits.

यहाँ "देवान्" श्ब्द का अर्थ है "पञ्चदेव" जो कि ईश्वर के पाँच स्पों में दिये गये हैं । इन के अलावे तैंतीस प्रकार के शास्त्रोक्त देवताओं का निष्कामभाव से पूजन करना भी " यजन्ते सात्त्विका देवान्" के अन्तर्गत मानना चाहिये ।

राजस मनुष्य यक्षों और राक्षसों का पूजन करते हैं । यक्ष राक्षस भी देवता योनि में गिने जाते हैं क्योंकि इन का आयु कल्प के अन्त तक का होता है और दोनो को स्वर्ग का अधिकार प्राप्त है । अपने पुण्य कर्म के आधार पर कभी देवता तो कभी राक्षस वहाँ सुख का भोग करते हैं । यक्षों में धन की संग्रह की मुख्यता होती है और राक्षसो में दूसरों का नाश करने की । अपनी कामना की पूर्ती के लिये और दूसरों का नाश के लिये राजस मनुष्यों में यक्षों और राक्षसों का पूजन करने की प्रवृति होती है ।

पित्रों की पुजा जो शास्त्रों के अनुसार विधिवत किया जाता है जैसे श्राद्ध, तर्पण आदि, वह देवपूजन के अन्तर्गत ही आता है क्योंकि ऐसा पूजन को अपना कर्तव्य समझ कर और पित्रऋण चुकाने के लिये शास्त्रों के विधान पूर्वक किया जाता है । पर जो लोग पित्र पूजा यह समझ कर करते हैं कि जैसे हम अपने पित्र के लिये श्राद्ध, तर्पणआदि करते हैं वैसे हमारे लिये भी हमारे कुल परम्परावाले भी करेगें और हमारे पित्रगण हमारी रक्षा करेगें, ऐसे लोग पित्रों को प्राप्त होते हैं ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।
दम्भाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥५॥
कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्रामम् अचेतसः ।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान् विद्धच् आसुरनिश्चयान् ॥६॥

जो लोग शास्त्रविधि से रहित घोर तप करते हैं, जो दम्भ और अभिमान से युक्त हैं, जो कामना और आसक्ति से प्रेरित हैं, जो शरीर में स्थित पंचभूतों को और सबके अन्तःकरण मे रहने वाला मुझ परमात्मा को भी कष्ट देने वाले अविवेकी लोग हैं, उन्हें तुम आसुरी स्वभाव वाले जानो. (१७.०५-०६)

भगवान् यहाँ ये बता रहे हैं कि शास्त्रविधि से रहित तप करने वाले (अर्थत शास्त्रों को न मानने वाले और केवल दिखानेवाले) इस संसार में आप को बहुत मिलेंगे ।

BG 17.5-6: Some people perform stern austerities that are not enjoined by the scriptures, but rather motivated by hypocrisy and egotism. Impelled by desire and attachment, they torment not only the elements of their body, but also I who dwell within them as the Supreme Soul. Know these senseless people to be of demoniacal resolves.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

आहारस् त्व् अपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ।
यज्ञस् तपस् तथा दानं तेषां भेदम् इमं शृणु ॥७॥

सब का प्रिय भोजन भी तीन प्रकार का होता है और वैसे ही यज्ञ, तप और दान भी तीन प्रकार के होते हैं. उनके भेद तुम मुझसे सुनो. (१७.०७)

BG 17.7: The food that people prefer is according to their dispositions. The same is true for the sacrifice, austerity, and charity they are inclined (or predisposed) toward. Now hear of the distinctions from Me.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ८ - **आयुःसत्वबलारोग्य, सुखप्रीतिविवर्धनाः ।**
रस्या स्निग्धाः स्थिरा हृद्या, आहाराः सात्त्विकप्रिया ॥

आयु, सत्व, गुण, बल, आरोग्य, सुख और प्रसन्नता बढ़ाने वाले, स्थिर रहनेवाले, हृदय को शक्ति देनेवाले, रसयुक्त तथा चिकने आहार, अर्थात् भोजन करने के पदार्थ, सत्विक मनुष्यों को प्रिये होते हैं ।

Persons in the mode of goodness prefer foods that promote the life span, and increase virtue, strength, health, happiness, and satisfaction. Such foods are juicy (succulent), nourishing, and naturally tasteful.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ९ - **कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।**
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥

अति कड़वे, अति खट्टे, अति नमकीन, अति गरम, अति तीखे (उत्तेजना पैदा करनेवाले), अति रूखे और अति दाहकारक, अर्थात् भोजन के पदार्थ, राजस मनुष्यों को प्रिये होते हैं, जो कि दुख, शोक और रोगों को देने वाले हैं ।

Foods that are too bitter, too sour, salty, very hot, pungent (having a strong sharp taste or smell), dry, and full of chillies, are dear to persons in the mode of passion. Such foods produce pain, grief, and disease.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १० - **यातयामं गतरसं पूति, पर्युषितं च यत् ।**
उच्छिष्टमपि चामेध्यं, भोजनं तामसप्रियम् ॥

जो भोजन सड़ा हुआ, सररहित, दुर्गन्धित, बासी और जूठा है तथा जो महान अपवित्र (मास आदि) भी है, वह तामस मनुष्य को प्रिये होता है ।

विशेष बातः- भोजन के लिये आवश्यक विचार - उपनिषदों में आता है कि जैसा अन्न होता है, वैसा ही मन बनता है -"**अन्नमयं ही सोम्य मनः**" । अर्थत् अन्न का असर मन पर पड़ता है । अन्न के सूक्षम सारभाग से मन (अन्तःकरण) बनता है, दूसरे नम्बर के भाग से वीर्य, तीसरे नम्बर के भाग से रक्त आदि और चौथे नम्बर के स्थूल भाग से मल बनता है जो कि बाहर निकल जाता है । अतः मन को शुद्ध बनाने के लिये भोजन शुद्ध और पवित्र होना चाहिये ।

प्रश्नः- ऊपर के तीन श्लोकों में भगवान ने - सात्त्विक अहार में पहले परिणाम का वर्णन करके फिर अहार के पदार्थों का वर्णन किया है । राजस अहार में पहले अहार के पदार्थों का वर्णन कर के फिर परिणाम का वर्णन किया । परन्तु तामस अहार के फल का वर्णन किया ही नहीं । ऐसा क्यों ?.

उत्तरः- यह इसलिये क्योंकि 'सात्त्विक' मनुष्य पहले परिणाम की तरफ देखते हैं, विचार द्वारा वे अहार आदि में प्रवृत्त होते हैं । इसलिये पहले परिणाम का फिर बाद में खाद्य पदार्थों का वर्णन किया गया है ।
'राजस' मनुष्यों की दृष्टि पहले खाद्य पदार्थों की तरफ, विष्यन्द्रिय-सम्बन्ध की तरफ जाती है, परिणाम की तरफ नहीं । अगर राजस मनुष्यों कि दृष्टि पहले परिणाम की ओर चली जाये तो वे राजस अहार आदि में प्रवृत होंगे ही नहीं । अतः राजस अहार में पहले खाद्य पदार्थों का वर्णन किया गया है ।
तामस मनुष्यों में मूढ़ता (बेहोशी) छाई हुई रहती है, इसीलिये उनमें अहार और उस के परिणाम का विचार होता ही नहीं । अहार न्याय युक्त है यह नहीं, उसमें हमारा अधिकार है यह नहीं, शास्त्रों की आज्ञा है यह नहीं, और उस का परिणाम हमारे लिये हितकर है यह नहीं, इन बातों पर तामस मनुष्य कुछ भी विचार नहीं करते, इसीलिये तामस अहार के परिणाम का वर्णन नहीं किया गया है ।

Foods that are overcooked, stale, putrid (rotting or decomposed), polluted, and impure are dear to persons in the mode of ignorance.

Important Point – In the Upanishads, it is mentioned, 'As is the food, so is the mind'. As the food, a man eats, so is his mind. So, a man should eat pure food because it purifies

his mind. Food is also the substances that builds one's muscles, bones, and the blood in the body. If the body is made up of food that should not be eaten, the mind and its thinking will be impure, unclear, confused, angry, doubtful etc.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अफलाकाङ्क्षिभिर् यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यम् एवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥११॥

यज्ञ करना हमारा कर्तव्य है — ऐसा सोचकर, बिना फल की आशा करने वालों द्वारा विधिपूर्वक किया गया यज्ञ **सात्त्विक** (true, honest, sincere, virtuous, excellent) है. (१७.११)

BG 17.11: Sacrifice that is performed according to scriptural injunctions without expectation of rewards, with the firm conviction of the mind that it is a matter of duty, is of the nature of goodness.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थम् अपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥

हे अर्जुन, जो यज्ञ फल की इच्छा से अथवा दिखाने के लिये किया जाता है, उसे तुम राजसिक समझो. (१७.१२)

BG 17.12: O best of the Bharatas, know that sacrifice performed for material benefit, or with a hypocritical aim, is in the mode of passion.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

विधिहीनम् असृष्टान्नं मन्त्रहीनम् अदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥१३॥

शास्त्रविधि, अन्नदान, मंत्र, दक्षिणा और श्रद्धा के बिना किये जाने वाले यज्ञ को तामसिक यज्ञ कहते हैं. (१७.१३)

BG 17.13: Sacrifice devoid of faith and contrary to the injunctions of the scriptures, in which no food is offered, no mantras chanted, and no donation made, is to be considered in the mode of ignorance.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १४ - देवद्विजगुरुप्राज्ञ, पूजनं शौचमार्जवम् ।
ब्रह्मचार्यमहिंसा च, शरीरं तप उच्यते ॥

भगवान्, ब्राह्मण, गुरूजन और जीवनमुक्त महापुरूष का यथायोग्य पूजन करना, शुद्धि रखना, सरल स्वभाव वाला होना, ब्रह्मचार्य धर्म का पालन करना और हिंसा ना करना - यह शरीर सम्बन्धी तप कहा जाता है ।

परिशिष्ट भाव - शारिरिक तप में त्याग मुख्य है, जैसे - पूजन करने में अपने में बड़प्पन के भाव का त्याग है । शुद्धि रखने में आलस्य-प्रमाद का त्याग है । सरलता रखने में अभिमान का त्याग है । ब्रह्मचार्य में विषयसुख का त्याग है । अहिंसा में अपने सुखके भाव का त्याग है । इस प्रकार त्याग करने से शारिरिक तप होता है ।

Worship of the Supreme Lord, the Brahmins, the spiritual master, the wise, and the elders—when this is done with the observance of cleanliness, simplicity, celibacy, and non-violence—is declared as the austerity of the body.

Important Point – In the penance (प्रयश्चित) of the body, renunciation is important; as in worship there is renunciation of one's superiority complex, in maintenance of purity there is renunciation of indolence (laziness, idleness) and heedlessness, in uprightness there is renunciation of pride, in celibacy (ब्रह्मचार्य) there is renunciation of mating as prescribed in (Gita 7/11). In non-violence there is renunciation of one's own comforts. Thus, renunciation involves the penance of the body.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १५ -

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं, प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव, वाङ्मयं तप उच्यते ॥

जो किसी को भी उद्विज्न न करनेवाला, सत्य और प्रिये तथा हिकारक भाषण है, वह तथा स्वध्याय (पठन-पाठन) और अभ्यास (नाम जप आदि) भी वाणी सम्बन्धी तप कहा जाता है ।

Words that do not cause distress, are truthful, inoffensive, and beneficial, as well as the regular recitation of the Vedic scriptures—these are declared as the austerity of speech.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १६ -

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रह ।
भावसंशुद्धिरित्येत्तापो मानसमुच्यते ॥

मन की प्रसन्नता, सौम्य भाव, मननशीलता, मन का निग्रह और भावों की भलीभांति शुद्धि- इस तरह, यह मन सम्बन्धी तप कहा जाता है ।

परिशिष्ट भाव - प्रतिकूल परिस्थिति में भी प्रसन्न रहे । अपने ऊपर परिस्थिति का असर न पड़े । दूसरे की प्रतिकूल बात सुन कर भी सौम्य रहे । मन की स्वतन्त्रता का त्याग कर

के मनन करे क्योंकि मन को स्वतन्त्र छोड़ने से सुखभोग होता है, मननशीलता (विचारधारा) नहीं आती। मन की मूढ़ क्षिप्त और विक्षिप्त वृतियों का त्याग करे। अपने मन में किसी के अहित का भाव न हो। यह सब मन सम्बन्धी तप हैं।

Serenity of thought, gentleness, silence, self-control, and purity of purpose—all these are declared as the austerity (penance- संयम) of the mind.

Important Point - A man should remain cheerful even in unfavourable circumstances. He should remain unaffected by circumstances. He should remain placid (gentle), even after hearing the undesirable utterance of others. He should not let the mind be free but make it contemplative (thoughtful) because by leaving it free, there is enjoyment of pleasure, and it does not become contemplative. He should renounce the deluded inclinations of his mind. He should never think ill of anyone. All this is penance (austerity) of the mind.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १७ -

श्रद्धया परया तप्तं, तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः, सात्विकं परिचक्षते॥

परम श्रधा से युक्त फलेच्छारहित मनुष्यों के द्वारा जो तीन प्रकार (शरीर, वाणी और मन) का तप किया जाता है, उस को सात्विक कहते हैं।

When devout persons with ardent faith practice these three-fold austerities without yearning for material rewards, they are designated as austerities in the mode of goodness.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १८ -

सत्जा रमान पूजार्थं, तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रिये तदिह प्रोक्तं, राजसं चलमध्रुवम्॥

जो तप सत्कार, मान और पूजा के लिये तथा दिखाने के भाव से भी किया जाता है, वह इस लोक में अनिश्चित (undesired) और नाशवान् फल देनेवाला फल राजस कहा जाता है।

Austerity that is performed with ostentation for the sake of gaining honour, respect, and adoration is in the mode of passion. Its benefits are unstable and transitory (temp).

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १९ -

मूढ ग्राहे णात्मनो, यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं, वा तत्तामसमुदाहृतम्॥

जो तप मूढ़ता पूर्वक हठ से अपने को पीड़ा देकर अथवा दूसरों को कष्ट देने के लिये किया जाता है, वह तप तामस कहा गया है।

Austerity that is performed by those with confused notions, and which involves torturing the self or harming others, is described to be in the mode of ignorance.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २० - दातव्य मिति यद्दनं, दीयते ऽनुपकारिने ।
देशे काले च पात्रे च, तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥

दान देना कर्तव्य है - ऐसे भाव से जो दान देश तथा काल और पात्र के प्राप्त होने पर अनुपकारी को अर्थात् निष्कामभाव से दिया जाता है, वह दान सात्विक कहा गाया है ।

परिशिष्ट भाव - यह सात्विक दान वास्तव में त्याग है । यह वह दान नहीं है, जिस के लिये कहा गया है -'एक गुना दान, सहस्त्रगुना पुन्य', क्योंकि उस दान के सात निष्कामता नहीं है बलिक फल की इच्छा है ।

Charity given to a worthy person simply because it is right to give, without consideration of anything in return, at the proper time and in the proper place, is stated to be in the mode of goodness.

Important Point – The Sattvik charity is in fact, renunciation. This is not the charity about which it has been said "If you offer charity, it bears its fruits a thousand time" as such charity is classified as sensual or desirous. Sattvik charity is where there is no desire of any fruits in return.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २१ - यत्तु प्रत्युपकारार्थं, फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
दीयते च परिक्लिष्टं, तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥

किन्तु जो दान क्लेशपूर्वक और प्रत्युकार के लिये अथवा फल प्राप्ति का उद्दश्य बना कर फिर दिया जाता है, वह दान राजस कहा जाता है ।

But charity given with reluctance, with the hope of a return or in expectation of a reward, is said to be in the mode of passion.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २२ - अदेश्काले यद्दानम, पात्रेभ्यश्च दीयते ।
असत्कृतम वज्ञातं, तत्तामस मुदाहृतम् ॥

जो दान बिना सतकार के तथा अवज्ञापूर्वक तथा अयोग्य देश और काल में कुपात्र को दिया जाता है, वह दान तामस कहा गया है ।

परिशिष्ट भाव - अन्न, जल, वस्त्र और औषध, इन चारो के दान में पात्र-कुपात्र आदि का विशेष विचार नहीं करना चाहिये । इस में केवल दूसरे की अवश्यकता को ही देखना

चाहिये ।
ग्यारहवे से बाईसवे श्लोक तक के इस प्रकरण में जो सातिव्क यज्ञ, तप और दान आये हैं,वे सब-के-सब दैवी सम्पति हैं **और जो राजस तथा तामस यज्ञ, तप और दान आये हैं, वे सब-के-सब असुरी सम्पति हैं ।**

And that charity, which is given at the wrong place and wrong time to unworthy persons, without showing respect, or with contempt, is held to be of the nature of **Tamsik** (of the mode of ignorance).

Important Point – A gift of food, water, clothes, and medicines, should be made to a needy recipient, without much thinking, whether he is worthy or unworthy and whether the place and time are auspicious or not. Offer food to a hungry man, water to a thirsty, clothes to the naked and medicine to the sick.
In this chapter from the eleventh to the 22nd, the Sattvik sacrifice, penance, and gifts, are included in divine nature while the Rajasik (passion) and Tamasik (ignorance) are included in demoniac nature.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २३ - **ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।**
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहितः पुरा ॥

ॐ तत, सत-इन तीन प्रकार के नामों से जिस परमात्मा का निर्देश (संकेत) किया गया है, उसी परमात्मा से सृष्टि के आदिमें वेदों तथा ब्राह्मणों और यज्ञों की रचना हुई है ।

The words "**Om Tat Sat**" have been declared as symbolic representations of the Supreme Absolute Truth, from the beginning of creation. From them came the priests, scriptures, and sacrifice.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २४ - **तस्मादो मित्युदाहृत्य, यज्ञ दान तपः क्रियाः ।**
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः, सततं ब्रह्म वादि नाम् ॥

इसलिये वैदिक सिद्धान्तों को मानने वाले पुरुषों की शास्त्र विधि से नियत यज्ञ, दान और तपरूप क्रियाएँ सदा 'ॐ' इस परमात्मा के नाम का उच्चारण करके ही आरम्भ होती है ।

Therefore, when performing acts of sacrifice, offering charity, or undertaking penance, expounders of the Vedas always begin by uttering "Om" according to the prescriptions of Vedic injunctions.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २५ - **तदित्य नभिसन्धाय, फलं यज्ञ तपः क्रियाः ।**
दान क्रियाश्च विविधाः, क्रियन्ते मोक्ष काङ्क्षिभिः ॥

तत् नाम से कहे जानेवाले परमात्मा के लिये ही सब कुछ है - ऐसा मान कर मुक्ति चाहने वाले मनुष्यों द्वारा फल की इच्छा से रहित होकर अनेक प्रकारकी यज्ञ और तपरूप क्रियायें तथा दानरूप क्रियायें की जाती है ।

Persons who do not desire fruitive rewards, but seek to be free from material entanglements, utter the word "Tat" along with acts of austerity, sacrifice, and charity.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २६ २७ - **सद्भावे साधुभावे च, सदित्य तत्प्रयुज्यते ।**
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥
यज्ञेतपसि दाने च, स्थितिः सदिति चोच्यते ।
कर्म चैव तदर्थीयं, सदित्ये वाभि धीयते ॥

हे पार्थ! 'सत्' - ऐसा ये परमात्मा का नाम सत्तामात्र में और श्रेष्ठ भाव में प्रयोग किया जाता है, तथा प्रशंसनीय कर्म के साथ 'सत' शब्द जोड़ा जाता है ।
यज्ञ तथा तप और दानरूप किया में जो स्थिति (निष्ठा) है, वह भी 'सत' - ऐसे कही जाती है, और उस परमात्मा के निमित किया जानेवाला कर्म भी 'सत्' - ऐसा काहा जाता है ।

The word "Sat" means eternal existence and goodness. O Arjun, it is also used to describe an auspicious action. Being established in the performance of sacrifice, penance, and charity, is also described by the word "Sat." And so any act for such purposes is named "Sat."

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २८ - **अश्रद्धया हुतं दत्तं, तपस्तप्तं कृतं च यत् ।**
असदित्युच्यते पाथ, न च तत्प्रेत्य नो इह ॥

हे पार्थ! अश्रद्धा से किया हुआ हवन, दिया हुआ दान और तपा हुआ तप तथा और भी जो कुछ किया जाये, वह सब 'असत' - ऐसा कहा जाता है । उसका फल न तो यहाँ होता है और न मरने के बाद ही होता है, अर्थात् उसका कहीं भी 'सत' फल नहीं होता ।

O son of Pritha, whatever acts of sacrifice or penance are done without faith, are termed as *"Asat."* They are useless both in this world and the next.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

गीता दर्पण के सत्रहवे अध्याय का तात्पर्य

शास्त्रविधि को जानने वाले अथवा न जाननेवाले मनुष्यों को चाहिये कि वे श्रद्धापूर्वक जो कुछ शुभ कार्य करते हैं, उस कार्य को भगवान् को याद कर के, भगवन्नाम का उच्चारण कर के आरम्भ करे ।

जो शास्त्रविधि को तो नहीं जानते, पर श्रद्धापूर्वक यजन-पूजन करते हैं, उन की श्रद्धा (निष्ठा, स्थिति) तीन प्रकार की होती है - सात्त्विकी, राजसी और तामसी । श्रद्धा के अनुसार ही उन के द्वारा पूजे जाने वाले देवता भी तीन तरह के होते हैं ।

जो यजन-पूजन नहीं करते, उनकी श्रद्धा की पहचान उन के अहार से हो जाती है, क्योंकि अहार (भोजन) तो सभी करते ही हैं ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

Gita Essence in English – Chapter 17

It is important for any human being (whether they are aware of the rules of the scriptures or not), to commence their selfless duties (or religious sacrifice) by remembering God and having absolute faith in him.

Those who are not aware of the rules of the scriptures but do their duties profoundly and with faith and belief in God, their faith or reverential belief falls under one of the three categories i.e. Sattvic, Rajsik or Tamsik. It is according to their faith and belief that they end up worshipping their deities.

Those who do not worship God or perform any spiritual Godly sacrifice, their devotion is reflected in the diet. As a result, they end up in the birth/death cycle and may fall from the supreme human species to one of the 8.4million species depending on their actions.

ॐ

ॐतत्सदिति श्रीमद्भगवतगीतासूपरिष्सु ब्रह्मविद्यां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदसोऽध्याय ॥ १७ ॥